रामायण : कतिपय प्रामाणिक तथ्य

डॉ. ताराशंकर शर्मा 'पाण्डेय'

भए प्रकट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनिमनहारी अद्भुत रूप बिचारी।।

माता कौशल्या को आनन्द देने वाला तथा मुनियों के मन को भाने वाला भगवान् विष्णु के अवतार श्रीराम का यह अद्भुत रूप स्वयं उनकी लीला का ही अंश है।

भगवान राम के सच्चिदानन्द स्वरूप से सम्बद्ध नाम, रूप, लीला और धाम ये चार पदार्थ हैं-

रामस्य नाम रूपं च लीला धाम परात्परम्।
एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्दविग्रहम् ।।

भगवान् राम ही समस्त लोकों के गुरु हैं क्योकि ऋषि मुनि ज्ञान-सागर में विद्या से ही रमण करते है-

यस्मिन् रमन्ते मुनयो विद्यया ज्ञानविप्लवे।
तं गुरुं प्राह रामेति रमणाद् राम इत्यपि।।

(अध्यामरामायण 3/40)

चक्रवर्ती नरेश महाराज दशरथ ने सन्तान न होने पर कुलगुरु मुनिराज वशिष्ठ की कपा एव महर्षि ऋष्यशृंग जी के आचार्यत्व में पुत्रेष्टि यज्ञ सम्पादित कर भगवान् विष्णु से अंशों सहित अवतार लेने का आश्वासन प्राप्त किया था।

महर्षि वाल्मीकि ने स्पष्टतया जन्मकाल के विषय में लिखा है -

ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ।।
नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पंचसु।
ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह।।
प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम्।
कौसल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम्।।

(वारा बालकाण्ड 18/8.9.10)

अगस्त्य संहिता के अनुसार त्रेता युग के अन्तिम दौर में चैत्र शुक्ल नवमी, सोमवार के दिन. मध्याह्नकाल में, पुनर्वसु नक्षत्र, कर्क लग्न में जब सूर्य अन्यान्य पाँच ग्रहों की शुभ दृष्टि के साथ मेष

राशि में विराजमान थे तभी साक्षात् भगवान् श्रीराम का माता कौशल्या के गर्भ से जन्म हुआ। भगवान् वेदव्यास ने महाभारत में स्पष्ट लिखा है-

चैत्रशुक्लनवम्यां तु जातो रामः स्वयं हरिः।
पुनर्वस्वृक्षयुक्तायां मध्याह्ने कौशले भृगौ।।

(सभा वनपर्व)

इस सन्दर्भ में अधोलिखित प्रमाण भी उपलब्ध होता है -

मासे मघौ या नवमी सुयुक्ता सिताऽदितीशेन शुभेन येन।
कर्के महापुण्यतमे सुलग्ने जातोऽत्र रामः स्वयमेव विष्णुः।।
सदात्र कुर्वीत मुदा व्रतोत्सवं रामार्चनं जागरणं महाफलम्।
अनेकजन्मार्जितपापनाशनं श्रीरामकीर्तेः श्रवणं च कीर्तनम्।।

भगवान् विष्णु का श्रीराम के रूप में अवतार का उद्देश्य लंकापति दशानन रावण के वध के साथ-साथ अन्यान्य दानवों एवं दैत्यों का विनाश कर धर्म की स्थापना एवं सज्जनो की रक्षा करना था। 'व्रतराज' ग्रन्थ में इस उद्देश्य को बहुत ही स्पष्ट शब्दों में कहा है -

दशाननवधार्थाय धर्मसंस्थापनाय च।
दानवानां विनाशाय दैत्यानां निधनाय च।।
परित्राणाय साधूनां जातो रामः स्वयं हरिः।

महर्षि पराशर के अनुसार सूर्यादि ग्रहों ने दैत्यों के बलनाश एवं देवों की बलवृद्धि हेतु अवतार ग्रहण किया जिसमें भगवान राम सूर्य के तथा श्रीकृष्ण चन्द्र के अवतार हैं-

दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये।
धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहा जाताः शुभाः क्रमात्।।
रामोऽवतारः सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः।
नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च।।
वामनो विबुधैज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च।
कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैहिकेयस्य शूकरः।।
केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः।

(बृहत्पाराशरहोराशास्त्र पू. 1/28-30)

महर्षि पराशर ने इन सभी अवतारों में से राम, कृष्ण, नृसिंह तथा शूकर अर्थात् वराह इन चार अवतारों को ही पूर्णावतार माना है-

रामः कृष्णश्च भो विप्र! नृसिंहः शूकरस्तथा।
एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः।।

(बृहत्पाराशरहोराशास्त्र पूर्व 1/25)

भगवान के विभिन्न अवतारों में कलाओं की सर्वाधिकता भगवान राम में स्वीकार की गई है–

तदा तु भगवान् साक्षाच्चतुर्दशकलो हरिः।
सीतापतिस्तदहृदये निवासं कृतवान् मुदा।।

(भविष्यपुराण प्रतिसर्गपर्व 3/7)

भविष्यपुराण के इस प्रमाण के आधार पर कहा जा सकता है कि सीतापति भगवान् राम चौदह कलाओ से युक्त स्वयं हरि के अवतार हुए। भगवान् राम ने मर्यादाओं की सीमाओ में रहते हुए विश्वकल्याणार्थ कार्य किया।

अयोध्या नरेश महाराज दशरथ की तीनों रानियों में कौशल्या से नवनीरद-श्याम भगवान श्रीराम, सुमित्रा से गौरवर्ण लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न तथा कैकेयी से श्यामवर्ण भरत का जन्म हुआ।

भगवान् श्रीराम के जन्म पर देवों, गन्धर्वो, अप्सराओं आदि सभी ने अपनी-अपनी प्रसन्नता अनेक प्रकार से प्रकट की। अप्सराएँ नाचने लगी. गन्धर्व मधुर गान करने लगे. देवों ने दुन्दुभी बजाई और आकाश से पुष्पवृष्टि की गई। श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के अनुसार अयोध्या में भी श्रीराम जन्म महोत्सव बहुत ही उत्साह से मनाया गया। अयोध्या में मनुष्यों की भारी भीड़ एकत्रित हो गई. गलियाँ और सडकें लोगों से खचाखच भरी थीं, नट और नर्तक अपनी-अपनी कलाएँ दिखाने लगे-

जगुः कलं च गन्धर्वा ननृतुश्चाप्सरोगणाः।
देवा दुन्दुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिश्च खात् पतत्।।
उत्सवश्च महानासीदयोध्यायां जनाकुलः।
रथ्याश्च जनसम्बाधा नटनर्तकसंकुलाः।।

(रामायण बालकाण्ड 18/17,18)

महाराज दशरथ ने अपने चार राजकुमारों के जन्मोत्सव पर चारण, भाट आदि को अनेकों उपहार दिये, ब्राह्मणों को हजारों गायें एवं विपुल मात्रा में धन दिया। जन्म के ग्यारहवें दिन के पश्चात् कुलगुरु वसिष्ठ ने इन चारों पुत्रों का नामकरण किया- ज्येष्टपुत्र का राम, कैकयी पुत्र का भरत, सुमित्रापुत्र का लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न आदि नाम किया-

अतीत्यैकादशाहं तु नामकर्म तथाकरोत्।
ज्येष्ठं राम महात्मानं भरतं कैकयीसुतम्।।

सौमित्रिं लक्ष्मणमिति शत्रुघ्नमपरं तथा।।
वसिष्ठः परमप्रीतो नामानि कुरुते तदा।।

(बालकाण्ड 20/21,22)

चारो राजकुमारों ने अपने पिता से ही शास्त्र एव शस्त्र की शिक्षा प्राप्त की। महर्षि वसिष्ठ के अनुसार किसी भी व्यक्ति के जन्म लेने के बाद उसके तीन गुरु स्वाभाविक रूप से होते है माता, पिता और आचार्य-

पुरुषस्येह जातस्य भवन्ति गुरवः सदा।
आचार्यश्चैव काकुत्स्थ! पिता माता च राघव।।

(वा.रा.अ.क. 111/2)

राम आदि चारों भाईयो का शिक्षा के लिये किसी भी गुरुकुल में प्रवेश लेने का उल्लेख वाल्मीकीय रामायण में कहीं भी नहीं मिलता है।

राम लक्ष्मण आदि चारों राजकुमारों को शिक्षा उनके पिता महाराज दशरथ ने दी। महाराज दशरथ स्वयं वेदादि शास्त्र एव धनुर्वेदादि शस्त्र की समस्त विद्याओं में पारंगत थे, अतः अपने पुत्रो को उनके द्वारा शिक्षा देना स्वाभाविक रूप से भी सिद्ध होता है-

पिता दशरथो हृष्टो ब्रह्मा लोकाधिपो यथा।
ते चापि मनुजव्याघ्रा वैदिकाध्ययने रताः।।
पितृशुश्रूषणरता धनुर्वेदे च निष्ठिताः।

(वा.रा.बा.का. 18/36,37)

इस प्रसंग से स्पष्ट है कि वेदविद्या का अध्ययन करते हुए चारों भाई पिता की सेवा में लगे रहते थे।

जब चारों भाई शिक्षा प्राप्त कर समस्त गुणों से समृद्ध हुए तो महाराज दशरथ अतिप्रसन्न हुए-

इष्टः सर्वस्य लोकस्य शशांक इव निर्मलः।
गजस्कन्धेऽश्वपृष्ठे च रथचर्यासु सम्मतः।।
धनुर्वेदे च निरतः पितुः सुश्रूषणे रतः।
वभूव परमप्रीतो देवैरिव पितामहः।
ते यदा ज्ञानसम्पन्नाः सर्वे समुदिता गुणैः।।

(वा.रा.बा.का. 18/34)

इस प्रकार चारों भाईयों ने अपने पिता महाराज दशरथ की सेवा करते हुए गजशास्त्र, अश्वशास्त्र, रथ संचालन तथा धनुर्वेद आदि समस्त विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया। वाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड

में भगवान शिव का वचन भी इसी बात को सिद्ध करता है-

एष राजा दशरथो विमानस्थः पिता तव।
काकुत्स्थ मानुषे लोके गुरुस्तव महायशाः।।

(यु.का. 119/7)

महाराज दशरथ द्वारा शिक्षा दिये जाने का यह प्रसंग महाकवि कालिदास ने भी रघुवंश में वर्णित किया है-

त्वचं स मेध्यां परिघाय रौरवीमशिक्षितास्त्रं पितुरेव मन्त्रवित्।
न केवलं तद्गुरुरेकपार्थिवः क्षितावभूदेकधनुर्धरोऽपि सः ।।3/31।।
गुणैराराधयामासुस्ते गुरुं गुरुवत्सलाः।
तमेव चतुरन्तेशं रत्नैरिव महार्णवाः।।10/85।।

ज्ञान सम्पन्न हो जाने पर महाराज दशरथ ने चारों भाईयों के विवाह के बारे में उपाध्याय वसिष्ट और अपने बन्धु बान्धवों से चर्चा की-

अथ राजा दशरथस्तेषां दारक्रियां प्रति।
चिन्तयामास धर्मात्मा सोपाध्यायः सबान्धवः।।

(बा.रा.बा.चा 18/37,38)

इस काल में ही एक दिन महर्षि विश्वामित्र अपने आश्रम में राक्षसों के उपद्रव की शान्ति के लिए गहाराज दशरथ से उनकी इच्छा न होने पर भी राम और लक्ष्मण को याचना कर ले गये। मुनिवर का आश्रम एवं यज्ञ रक्षित हुआ, इसमें राक्षसी ताटका एक ही बाण से धराशायी हई, दल सहित सुबाहू मारा गया तथा उसका भाई मारीच बाण के आघात से सौ योजन दूर समुद्र-तट पर जा गिरा। तपोवन में ही महर्षि विश्वामित्र को विदेहराज जनक से सीता-स्वयंवर आमन्त्रण मिला।

भगवती सीता उन विदेहराज की अयोनिजा कन्या थी। वैशाख मास शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पुष्य नक्षत्र युक्त मंगलवार के दिन मिथिलाधिपति राजा जनक मध्याह्नकाल में संतान प्राप्ति की कामना से यज्ञ की भूमि जोत रहे थे, उसी समय पृथ्वी से भगवती सीता का प्राकट्य हुआ-

पुष्यन्वितायां तु कुजे नवन्या, श्रीमाधवे मासि सिते हलेन।
कृष्टा क्षितिः श्रीजनकेन तस्यां सीताविरासीद व्रतमत्र कुर्यात्।।

(श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर-80)

जोती हुई भूमि तथा हल की नोक को भी सीता कहते हैं, अतः प्रादुर्भूत भगवती देवी 'सीता के ही नाम से विख्यात हुई।

जनकपुर में प्रवेश के बाद पुष्पवाटिका में सीता को देख भगवान राम के मुख से बरबस ही निकल पड़ा-

सुन्दरता कहूँ सुन्दर करई।
छविगृहँ दीपशिखा जनु बरई।।

यहाँ सीता के लिए दी गई दीपशिखा की उपमा कालिदास की दीपशिखा का स्मरण दिलाती है।

जनकपुत्री भूमिसुता सीता उसे वरण करेगी, जो भगवान शंकर के महाधनुष 'पिनाक' को तोडेगा। मिथिला नरेश जनक की इस प्रतिज्ञा को राम ने पूर्ण की। स्वयंवर तो हुआ पर विधिवत् विवाह-परम्परा के निर्वाह के लिए महाराज जनक ने अपने दूत द्वारा महाराज दशरथ को विवाह के लिए बारात लेकर आने का निमन्त्रण भेजा। इसके बाद मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की पंचमी को जनकपुर में श्रीराम का सभी भाइयो के साथ विवाह सम्पन्न हुआ-

अगहन शुक्ला पंचमी भानुवार शुभ वर्ष।
परिणय सीताराम को यह ज्योतिष निष्कर्ष।।

(भँवर जी जानाडा रचित रामकथा महाकाव्य-65/क)

इसमें भगवान राम ने सीता का, लक्ष्मण ने जनक की (पत्नी सुनयना से उत्पन्न) औरस पुत्री उर्मिला का तथा जनक के भाई की कन्याओं में भरत ने माण्डवी का, शत्रुघ्न ने श्रुतिकीर्ति का वरण किया-

रामाय प्रददौ सीतां लक्ष्मणायोर्मिलां ददौ।
भरताय सुतां प्रादान्माण्डवीं मुनिपुङ्गव।।
शत्रुघ्नाय ददौ कन्यां श्रुतकीर्ति शुभाननाम्।
तासां सीता तु सम्प्राप्ता यज्ञभूमिविशोधने।।
उर्मिलौरससम्भूता द्वे परे भ्रातृकन्यके।

(देवीपुराण शक्तिपीठाक 38/11.12.13)

जहाँ भगवती सीता का प्राकट्य हुआ मिथिला के उस स्थान को लोग पुनौरा (पुण्यारण्य का अपभ्रश रूप) कहते हैं. यह स्थान मिथिला-प्रगन्ना में सीतामढ़ी से दो किलोमीटर दूर है।

वर्तमान बिहार राज्य स्थित सीतामढी (मढी-कुटिया) स्थान में जानकी का हलकर्षण से आविर्भाव हुआ। राजा जनक की राजधानी जनकपुर जहाँ भगवान् राम का विवाह संस्कार हुआ वह बिहार राज्य के उत्तर (सम्प्रति नेपाल देश) में स्थित है। सभी इतिहासकारों ने एकमत होकर जनकपुर को माता जानकी की मातृभूमि के रूप में माना है।

इस प्रकार चैत्र शुक्ल नवमी को मध्याह्नकाल में भगवान् श्री राम का तथा वैशाख शुक्ल नवमी को मध्याह्न काल में भगवती सीता का आविर्भाव होने से दोनों ही नवमी तिथि वैष्णवों के लिए परम पावन दिवस है।

भगवान् श्रीराम अवतार का मुख्य उद्देश्य पुलस्त्य के पौत्र तथा विश्रवा के पुत्र लंकाधिपति रावण-वध के साथ-साथ साधुओं की रक्षा और धर्म की स्थापना करना था। अतः महाराज दशरथ द्वारा राम के जन्म दिवस के शुभ समय पर निश्चित किया गया राम के राज्याभिषेक के अवसर पर ही महारानी कैकेयी ने वचनबद्ध महाराज से भरत को राज्य एवं राम को चौदह वर्ष के वनवास का वर मांगा। रघुवंश की मर्यादा एवं पितृवचन की रक्षा के लिए भाई लक्ष्मण एवं पत्नी जानकी के साथ भगवान राम ने वनगमन किया। वनवास के दौरान राम जब चित्रकूट में थे, तब पिता दशरथ के स्वर्गगमन का समाचार मिला। वशिष्ठादि गुरुजनो द्वारा राजा नियुक्त किये गये भरत ने राज्य स्वीकार नहीं किया, अपितु राम से वनवास में ही सम्पर्क कर उन्हें राज्य सम्भालने हेतु निवेदन किया। भरत के बहुत अनुनय विनय करने पर भी भगवान राम ने पितृवचन आदेश की पालना में रहते हुए राज्य स्वीकार नहीं किया तो भरत ने उनकी चरण पादुकाएँ सिंहासन पर स्थापित कर राज्य का संचालन किया तथा नन्दिग्राम गे ही चौदह वर्ष तक तप करते हुए 'गोमूत्र-यावक' अर्थात गोमूत्र में जौ पकाकर उसके आहार पर रहे।

चित्रकूट से प्रस्थान कर भगवान राम ने दण्डकारण्य में प्रवेश किया। वही पर रहते हुए 'विराध' राक्षस का वध किया तथा जनस्थान में रहने वाली शूर्पणखा को लक्ष्मण ने विरूपित किया। दोनों भाईयों ने जनस्थान में विचरण करने वाले शूर्पणखा द्वारा प्रेरित खर, दूषण, त्रिशिरा आदि चौदह हजार राक्षसों का वध किया। लंकाधिपति रावण ने अपने जातीय राक्षसों के वध से क्रुद्ध होकर मारीच के सहयोग से सीता का हरण किया।

लंकाधिपति रावण द्वारा सीताहरण के पश्चात श्रीहनुमान जी ने सौ योजन विस्तृत समुद्र लांघ कर सीता का पता लगाया।

लंका पर आक्रमण करने के लिए सेना के प्रस्थान हेतु समुद्र पर नल और नील द्वारा पुल बाँधा गया, जो 'रामसेतु' के नाम से विख्यात हुआ। इस रामसेतु की महिमा का वर्णन भगवान वेदव्यास ने स्कन्दपुराण में किया है :

अस्ति रामेश्वरं नाम रामसेतौ पवित्रितम्।
क्षेत्राणामपि सर्वेषां तीर्थानामपि चोत्तमग।।
दृष्टमात्रे रामसेतौ मुक्तिः संसारसागरात्।

_(स्कन्दपुराण, ब्राह्म, सेतुमाहात्म्य)

अर्थात् भगवान् राम द्वारा बनवाये गये रामसेतु पर रामेश्वर नामक तीर्थ है, जो सभी तीर्थों में उत्तम है तथा जिसके दर्शन करने पर संसार सागर से मुक्ति हो जाती है।

धार्मिक मासिक पत्र कल्याण (वर्ष 81-3, 4) के अनुसार सन् 1966 ई. में उपग्रह जैमिनि -द्वितीय ने पृथ्वी पर इस लुप्त सेतु का चित्र भेजा। इसके बाइस साल बाद आई.आर एस.-1-ए ने तमिलनाडु के तट पर स्थित रामेश्वर और जाफना प्रायद्वीप के बीच समुद्र के भीतर एक भूमि-पट्टी का पता लगाया और उसका चित्र खींचा। 'राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद' के महानिदेशक के अनुसार नासा चित्रों के संग्रहालय के 75 प्रतिशत चित्र जनता के लिए अमरीका से बाहर उपलब्ध हुए है। सन् 1993 ई. में राजधानी दिल्ली के प्रगति मैदान में स्थित 'राष्ट्रीय विज्ञान केन्द्र की प्रदर्शनी में उपग्रह द्वारा खींचा गया एक ऐसा चित्र दिखाया गया जो इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत करता है कि कभी रामेश्वरम् से श्रीलंका के जाफना तक समुद्र पर एक पुल बनाया गया था। 14 दिसम्बर 1966 को अतरिक्ष से नासा द्वारा इस चित्र के साथ अनेक चित्र लिये गये। इन चित्रों एवं सामग्रियों से यह ज्ञात हुआ कि रामेश्वरम् और श्रीलंका के बीच 30 मील (48 किलोमीटर) लम्बा तथा सवा मील (लगभग 2 किलोमीटर) चौडा सेतु पानी में डूबा पड़ा है। इस सेतु के ऊपर जहाँ तहाँ 3 से 30 फुट तक का जलस्तर है। एक एजेन्सी के अनुसार रेत और पत्थर से मानवनिर्मित यह सेतु 17 लाख 50 हजार वर्ष पुराना है।

भगवान श्रीराम ने शारदीय नवरात्र में देवी अर्चना की तथा विद्वानों के मतानुसार आश्विन शुक्ल दशमी तिथि को श्रीराम ने अपनी विजय-यात्रा का प्रारम्भ किया। इस सम्बन्ध में हनुमन्नाटक का यह श्लोक भी उल्लिखित किया जा सकता है-

अथ विजयदशम्यामाश्विने शुक्लपक्षे,
दशमुखनिधनाय प्रस्थितो रामचन्द्रः।
द्विरदविधुमहाब्जैर्यूथनाथैस्तथान्यैः,
कपिभिरपरिमाणैर्व्याप्तभूदिक्खचक्रैः।।

अतएव यह तिथि विजय-यात्रा के लिए शास्त्र सम्मत मानी गई है -

आश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां तारकोदये।
स कालो विजयो नाम सर्वकार्यार्थसाधकः।।

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार भी राजाओं की दिग्विजय के लिए यह तिथि जयसिद्धिकरी कही गई है।

भगवान राम ने रावणवध एव लंकाविजय के बाद राक्षसेन्द्र विभीषण का लंकाधिपति के रूप से अभिषेक किया तथा पुष्पक विमान से अयोध्या प्रस्थान किया। बीच में भरद्वाज आश्रम पर विश्राम करते हुए हनुमान द्वारा नन्दिग्राम में स्थित भरत के पास सन्देश भेजा। नन्दिग्राम में आकर भगवान् राम

जटाओं का परित्याग कर भरत आदि के साथ अयोध्या आये। वर्तमान में प्रचलित परम्परा के अनुसार कार्तिक मास की कृष्णा चतुर्दशी को भगवान् श्रीराम अयोध्या लौटे तो संयोग से उसी दिन श्री हनुमान जी की जन्मतिथि भी थी। दूसरे दिन कार्तिक अमावस्या को राम के आगमन पर दीपोत्सव मनाया गया। परन्तु दीपावली से पूर्व राम का अयोध्या आना ऐतिहासिक भूल का परिणाम है। क्योंकि भगवान राम का राज्याभिषेक उनके जन्म दिवस चैत्र शुक्ला नवमी को होना था और तभी वनवास की आज्ञा हुई तदनुसार चैत्र शुक्ल पक्ष में ही राम का अयोध्या आगगन निश्चित होता है।

श्रीराम ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये तथा असंख्य गायें, स्वर्ण आदि का दान दिया। मूल रामायण के अनुसार इस प्रकार धर्मपूर्वक शासन करते हुए भगवान राम ने ग्यारह हजार वर्ष तक राज्य किया -

दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च।
रामो राज्यमुपासित्वा ब्रह्मलोकं प्रयास्यति।।

(मूल रामायण-97)

भगवान् राम के धर्मपूर्वक शासन को ही उत्तम मानते हुए वर्तमान में राम-राज्य की संज्ञा दी जाती है।

आचार्य, साहित्य विभाग
निदेशक, शैक्षणिक परिसर,
ज.रा. राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
2381, 'पाण्डेय भवन'
खजाने वालों का रास्ता, जयपुर (राज.)